JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

Bhartiya Sangeet : Naad Evam Adhyatmikta

Dr. Kiran Sharma
Assistant Professor (Music)
R.G.(P.G.) College, Meerut (U.P.)

सारांश

भारतीय सांगीतिक परम्परा प्रारम्भ से ही धर्म एवं आध्यात्म प्रधान रही है। संगीत स्वयं ईश्वर को प्रिय कला है। आदि नाद 'ओऽम' की साधना हमारे ऋषि मुनि करते रहे हैं। स्वयं ओऽम ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश की शक्तियों का द्योतक है। वैदिक कालए प्राचीन काल से लेकर मध्यकाल के भक्ति कालीन कवियों तक संगीत मात्र मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि ईश्वरोपासना का एकमात्र माध्यम माना गया था। वर्तमान में भी मंदिरों, देवालयों में धार्मिक परम्पराओं के आयोजन में संगीत अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। शास्त्रों में सम्पूर्ण संसार को नाद के आधीन बताया गया है। यही नाद संगीत कला का प्राण है। नाद से ही श्रुति तथा श्रुति से स्वर की उत्पत्ति हुई है। श्रुतिए स्वर, लय ताल, वर्ण ये सभी सांगीतिक रचनाओं की उत्पत्ति का आधार है अर्थात सबका मूलाधार नाद ही है। नाद की उपासना का अर्थ है आध्यात्म एवं एकाग्रता। संगीत कला में स्वरोपासना के लिए ध्यान, एकाग्रता तथा तन्मयता की अवस्था ही आध्यात्मिकता की प्रेरक है। इसीलिए भारतीय संगीत कला को आध्यात्मिक दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ कहा गया है।

मुख्य शब्द - नाद, अभिव्यक्ति, संगीतिक परम्परा, आध्यात्म, एकाग्रता, ध्यान, श्रुति, स्वर

भारतीय संगीतः नाद एवं आध्यात्मिकता

भारतीय परम्परा में प्रारम्भ से ही संगीत को ईश्वरीय देन माना गया है। संगीत कला दिव्य सौन्दर्य से परिपूर्ण है धार्मिक अभिव्यंजना ललित कलाओं की आधारभूमि रही है। संगीत कला का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है इसका सम्बन्ध मानव जीवन से है, दूसरे शब्दों में संगीत मानव जीवन की अभिव्यक्ति है। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार कला वह है जो मोक्ष प्राप्ति में सहायक हो। पूजा, स्तोत्र, जप और गान में, गान को ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। भारतीय संगीत परम्परा में आध्यात्मिकता के तत्व प्रारम्भ से ही विद्यमान है। संगीत मात्र मनोरंजन का साधन नहीं था। नारद, तुम्बरू से लेकर मध्यकालीन भक्ति कवियों तक संगीत ही ईश्वरोपासना का एकमात्र माध्यम रहा है। आज भी देवालयों में पूजा अराधना में संगीत ही अभिव्यक्ति का माध्यम है चाहे वह गायन, वादन अथवा नृत्य किसी भी रूप में हो। संगीत का आधार स्वर हैं। स्वर का आधार श्रुति तथा श्रुति का आधार नाद है। नाद सम्पूर्ण जगत में व्याप्त है। मंगलमय 'ऊँ' आद्य ध्वनि है। 'ऊँ' को नादब्रह्म का सर्वोच्च उद्गम माना गया है। नाद से ही ब्रह्म की ओर उसी प्रकार बढ़ सकते है जिस प्रकार मणि की प्रभा से आलोकित व्यक्ति आलोक के मार्ग तक चल कर मणि तक पहुंच सकता है। मणि यदि ब्रह्म है तो नाद उसकी प्रभा है। शास्त्रों में कहा गया है

"नादोपासनायः देवा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वरा।"

यही नाद संगीत कला का प्राण है। रंज्जक नाद ही संगीत में रसानुभूति का आधार है।

नाद का प्रभाव सम्पूर्ण जगत में व्याप्त है संगीत दर्पण में कहा गया है

"नादेन व्यज्यते वर्णः पदं वर्णात् पदाद्वच।

वचसो व्यवहारोऽयं नादाधीनमतो जगत् ।।"

अर्थात नाद से वर्ण, वर्ण से पद तथा पद से वाक्य बनता है। वाक्य से ही सम्पूर्ण जगत का व्यवहार संचालित होता है। अतः सारा संसार नाद के आधीन है। भारतीय संगीत में शब्द को ब्रहमा तथा अक्षर को शारवत् माना गया है। 'ऊँ' ही सम्पूर्ण संसार का सृजन करने वाला, प्रथम नाद है। ऊँ को ही 'काक्षर ब्रहमा' माना गया है। सर्वप्रथम प्राणियों के मूलाधार में अर्थ विवक्षा से शब्द ब्रहमा का प्रादुर्भाव होता है। इसे ही 'परा' वाक् कहा गया है। मूलाधार से नाभिपर्यन्त उदीर्ण हुई वाक् 'पश्यन्ति' कहलाती है।

पश्यन्ति का अर्थ है 'देखती हुई' यहीं वाणी तथा स्वर का साक्षात्कार होता है। किन्तु ये दोनों ही अति सूक्ष्म हैं। अतः समाधि में लीन योगी ही इसका अनुभव कर पाते हैं। इसके पश्चात यह विवक्षाधीन शब्द हृदय स्थान पर आता है। हृदय को 'मध्यमा' का वाक् केन्द्र कहा गया है। यदि हम अपने कानों को दोनों हाथों से ढंक कर बन्द कर ले तो भी एक सूक्ष्म ध्वनि हमारे मस्तिष्क में गूंजती सुनायी देती है। तदुपरान्त यहीं नाद कंठ में आकर मूर्धा पर अभिघात करता है। यह अभिघात कंठ, ताल, ओष्ठ, मूर्धा, दंत आदि स्थानों पर विदीर्ण हो जाती है और तभी आत्ममनोवृद्धि से अभिप्रेत शब्द एवं स्वर का स्फोट-रूप में उच्चारण होता है जो सर्वसाधारण को भी सुनाई देता है। इसी को 'वाक्' कहा गया है। इसका अर्थ यही है कि शब्द (साहित्य) एवं नाद (संगीत) का अंतरतम् स्थान व रूप एक ही है।

भारतीय संगीत में नाद के अध्यात्मिक स्वरूप का बड़ा महत्व है। भारतीय संगीत की उत्पत्ति वेदों से हुई है। वैदिक कालीन संगीत में वेदों की ऋचाओं का गान मंदिरों के प्रांगण में किया जाता था। संगीत का लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति का साधन माना जाता था इसी संदर्भ में कहा गया है।

"वीणा वादन तत्वज्ञ श्रुति जाति विशारदः ।

तालज्ञश्चा प्रयासेन मोक्ष मार्ग निगच्छति ।।"

संगीत लौकिक अभ्युदय के साथ-साथ पारलौकिक कल्याण की सिद्धि का भी साधन माना गया। भक्ति के जितने भी रूप जैसे साधन, जप, तप, ध्यान, योग आदि है इन सभी में नादरूपी संगीत को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। नाद की उपासना ईश्वर प्राप्ति का सहज और सुलभ माध्यम माना गया। नाद के मधुरता रूपी गुण में एक ऐसी शक्ति है जो भक्ति के माध्यम से ईश्वर के निकट पहुंचने का साधन मानी गयी। सूर, तुलसी, मीरा, रहीम आदि कवियों ने अपनी अनेकोंनेक रचनाओं में नादमयी संगीत के द्वारा ईश्वरोपासना की परम आनंदमयी अभियक्तियां की हैं इसी कारण वे भक्त शिरोमणि कहलायें।

नाद के दो रूप माने गये है एक अनाहत नाद एवं दूसरा आहत नाद। अनाहत नाद अपने अव्यक्त रूप में सम्पूर्ण चराचर में व्याप्त है, ऐसा माना गया। इस नाद को एक योगी का हृदय ही अनुभव कर सकता है यह एक योगी अथवा साधक को ब्रह्मलीन कर एक अलौकिक आनंद की अवस्था में तल्लीन कर देता है जहाँ सभी विषय विकार समाप्त हो जाते है। नाद का दूसरा रूप आहत नाद कहलता है जो अव्यक्त नाद का व्यक्त रूप है। इस नाद की उत्पत्ति आघात से मानी गयी है। संगीत में इसी आहत नाद का उपयोग होता है।

आहत नाद का मूल मधुरता है। इस मधुरता में वह शक्ति निहित है जो भक्त के हृदय को इस प्रकार ईश्वर के साथ जोड़ देती है कि वह अपनी आत्मा को परमात्मा के साथ तादात्म करके परम आनंद का अनुभव करने लगता है। कहा गया है कि भगवान का निवास योगियों के योग में नहीं तपस्वियों के तप में नहीं, याज्ञिकों के यज्ञ में नहीं वरन्- "मदभक्ता यंत्र गायन्ति, तत्र तिष्ठामि नारदः" अर्थात मधुर स्वर से आर्त होकर गाने वाले भक्त के हृदय में ही भगवान वास करते है।

नाद की उत्पत्ति का प्राकृतिक एवं वैज्ञानिक कारण है कम्पन। नियमित कम्पन एवं स्थिर आन्दोलन ही संगीतोपयोगी नाद है। ब्रहमांड के अन्तर्गत सम्पूर्ण चराचर पदार्थ के नादमय या शब्दमय होने के मूल में कम्पन है। नियमितता ही स्वर के सौन्दर्य को बढ़ाती है। संगीत चिंतकों ने अनियमित ध्वनि को कोलाहल की संज्ञा दी है। नाद के अतिसूक्ष्म, सूक्ष्म, पुष्ट, अपुष्ट (व्यक्त, अव्यक्त) तथा क्रत्रिम ये पांच प्रकार माने गये है जिन्हें नाभि, हृदय, कंठ, मूर्धा एवं मुख में स्थित माना गया है।

नाद स्वयं में ही सुन्दर ध्वनि है। नाद में ही सत्यं, शिवं सुन्दरम का समन्वय है। नाद की साधना से ही सत् (सत्यम) चित् (शिवम्) आनंद (सुन्दरम) की प्राप्ति सम्भव है। नाद को आत्मानुसंधान में सहायक निरूपित किया गया है।

"नाद रूपं परं ज्योर्तिनादरूपी स्वयं हरिः ।"

अर्थात नाद ही परम् ज्योति है। स्वयं हरि नाद रूप है।

विद्वानों के अनुसार नाद की उत्पत्ति आघात प्रत्याघात के माध्यम से होती है। वस्तुतः वायुमंडल इन्हीं नादो का समूह मात्र है। इसीलिए नाद को आकाश का गुण कहा गया है। इसे 'शब्दगुणकयाकाशम्' कहा गया यानि पूरा ब्रह्मांड नादमय है। नाद से ही श्रुति एवं श्रुति से ही स्वर की उत्पत्ति मानी गयी है।

स्वरों की उत्पत्ति का मूल कारण है वायु। नारदीय शिक्षा ग्रंथ के अनुसार स्वरों की अभिव्यक्ति के लिए नाभि प्रदेश के साथ वायु का सम्बन्ध अनिवार्य है। संगीतोपयोगी स्वरों के उदभव का यही मूल उदगम है। नाभि से उदभूत वायु हृदय, कंठ, जिव्हा, तालू, नासिका एवं मस्तक के सहयोग से स्वरों की उत्पत्ति में सहायक होती है। हमारे संगीत शास्त्रियों के अनुसार यदि हम किसी भाव को स्वरों के माध्यम से व्यक्त करना चाहते हैं तो आत्मा मन को प्रेरित करती है। मन शरीर में रहने वाली अग्नि को जगाता है अग्नि वायु को उठाती है, इस वायु के कंपायमान होने पर क्रमशः नाभि स्थल से ही नाद की उत्पत्ति होती है। यही नाद अलौकिक आनंद का आधार है। नादमयी संगीत में लीन साधक का मनः सुखः दुखः इत्यादि सांसारिक विषयों से निवृत्त होकर ब्रहमानंद की अवस्था को प्राप्त करता है।

संगीत कला को आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सर्वोत्कृष्ट कहा गया है। आध्यात्मिकता का मूल एकाग्रता में हैं। संगीत कला में भी अवधान एवं एकाग्रता प्रमुख गुण है। संगीत कला में स्वरोच्चार के साथ ही एकाग्रता की साधना प्रारम्भ हो जाती है। अवधान के द्वारा ही प्रकाश ज्ञान, आनंद एवं रस की अनुभूति होती है। संगीत की सूक्ष्म स्वरावलियों के लिए भी ध्यान तथा तन्मय होने की अपेक्षा होती है। अवधान के द्वारा ही हमारे ऋषि मुनियों ने ज्ञान प्राप्त किया।

तात्पर्य यह है कि आहत नाद भले ही सांसारिक रूप में उत्पन्न होता हो उसकी परिणित अंत में आध्यात्मिकता में होती है। इतिहास गवाह है कि भारत पर अनेकानेक विदेशी आक्रमण होने के उपरान्त भी हमारे संगीत की मूल आत्मा अक्षुण्ण है। भारतीय संगीत में वही अध्यात्मिक तत्व विद्यमान है जिसका मूल गुण वह स्वर्गिक आनंद है जिसे ब्रहमानंद सहोदर कहा गया है।

संदर्भ ग्रन्थ -

1. भारतीय शास्त्रीय संगीत एवं सौन्दर्य शास्त्र- डा0 अनुपम महाजन
2. भारतीय संगीत का सौन्दर्य विधान - डा0 मधुर लता भटनागर
3. भारतीय संगीत एक वैज्ञानिक विश्लेषण - डा0 स्वतंत्र शर्मा
4. 'संगीत' पत्रिका अगस्त 1976, संगीत कार्यालय हाथरस
5. 'संगीत' पत्रिका अगस्त 1978, संगीत कार्यालय हाथरस
6. संगीत निबन्ध (संगीत कार्यालय हाथरस)
7. संगीत पत्रिका - अगस्त 1980
8. संगीत पत्रिका - सितम्बर 1982